International Journal of Applied Research 2017; 3(7): 816-817

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2017; 3(7): 816-817
www.allresearchjournal.com
Received: 20-06-2017
Accepted: 21-06-2017

मंगत राम
कुलचन्दू यमुना नगर (हरियाणा)

Correspondence
मंगत राम
कुलचन्दू यमुना नगर (हरियाणा)

ऋग्वेद में दार्शनिक तत्त्व

मंगत राम

प्रस्तावना

जैसा कि स्पष्ट है कि दर्शन का आरम्भ मानव कि जिज्ञासा से हुआ और यह जिज्ञासा प्रथमत: दिव्य तत्त्वों के प्रति आविर्भूत हुई। परम सत्ता की खोज ने वैदिक ऋषियों को प्रश्नाकूल कर दिया तथा विप्रों ने 'एकं सत्'1 का बहुधा आख्यान किया। जिसमें ऋग्वेद का प्रतिनिधि देवता इन्द्र बना। ऋग्वेद का ऋषि 'स जनास इन्द्र:2 कहते हुए भाव पुलकित मन से उसका विशद परिचय प्रस्तुत करता है। परमसत्ता के विराट् व्यक्तित्व के अनेक कोण है और अग्नि, विष्णु, वरुण, रुद्र, यज्ञ, आदित्य आदि सामान्यतया उन्हीं कोणों के अलग-अलग प्रतीक हैं जब कि मूल रूप में उनमें एक अनुस्यूत है।

ऋग्वेद का नासदीय सूक्त दर्शन की दृष्टि से सर्वाधिक महत्त्व का है3। इस सूक्त में न केवल ब्रह्माण्ड की प्रकृति के विषय में गम्भीर समस्याओं को उठाया गया है अपितु रहस्यों की अतल गहराइयों तक जाने का प्रयास किया गया है4। सृष्टि के सम्बन्ध में नासदीय सूक्त वैदिक कवि की कल्पना का उत्कृष्टतम उदाहरण है।

सृष्टि के सम्बन्ध में ऋग्वेद में विचार अवश्य किया गया है फिर भी ब्रह्म का चिन्तन व विवेचन उसका प्रमुख विवेच्य है। पुरूष सूक्त में यह घोषणा की गई है कि पुरूष ही व्रह्माण्ड है। उसके तीन चरण द्युलोक में अमर है। वह सहस्रो शिर, नेत्र तथा पैरों से युक्त है। उसके अंगों से ही चारों वर्णों की उत्पत्ति हुई तथा सूर्य, चन्द्र भी आविर्भूत हुए। स्वयं उसके सिर से ही द्युलोक, पैरों से पृथ्वी तथा नाभी से उसके मध्य के प्रदेश वने। ब्रह्माण्ड, उसका सृष्टा तथा ब्रह्माण्ड के रहस्य का निरुपण होने के कारण ऋग्वेद में दार्शनिक परम्परा का आरम्भ होता है।

मैक्समूलर को ऋग्वेद में बहुदेवतावाद की स्पष्ट छाप दिखाई पड़ती है5। किन्तु मूल वैदिक चिन्तन एकेश्वरवादी है तथा पुरूष को ही भूत, वर्तमान और भविष्य के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है -

पुरूष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्।। ऋग्वेद 10 - 90 - 2

ऋग्वेद में देवताओं के गुण - धर्मों का विशद वर्णन उपलब्ध होता है। ऋग्वेद में आत्मा का भी उल्लेख है। आत्मतत्त्व के लिए और परमात्व तत्त्व के लिए भी सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च कहकर सूर्य को जड़जगमात्मक जगत का आत्मा स्वीकारा गया है। इन्द्रो मायाभिः पुरूरूप ईयते की उक्ति के द्वारा वैदिक ऋषि की यह धारणा व्यक्त होती है कि परम ऐश्वर्यवान वह आत्मा माया से युक्त होकर अनेक रूपों को धारण करता है। इसी नानारूपता के अवलम्बन से ब्रह्माण्ड की रचना होती है। आत्मा के साथ माया का संयोग होते ही उसकी संज्ञा जीव हो जाती है। यह आत्मतत्त्व नित्य और कूटस्थ है।

इस प्रकार का विचार आगे चलकर भी पल्लवित हुआ। ऋग्वेद में द्वैत और अद्वैत दोनो के मूलाधार तत्त्वों के दर्शन होते हैं। दो पक्षी और एक वृक्ष के रूपक के द्वारा आत्मा और परमात्मा दोनों तत्त्वों की ओर इंगित किया गया है6। इन दोनों पक्षियों में मौलिक अन्तर यह है कि जीवात्मारूपी पक्षी संसार रूप वृक्ष के फलों का भोग करता है जबकि परमात्मारूपी पक्षी विना फलों का स्वाद लिए निर्लिप्त भाव से प्रकाशमान होता रहता है। रूपक के माध्यम से ही ऋग्वेद में शब्द ब्रह्म का उत्तम चित्रण किया गया है। जिससे परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी नामक चार वाक्, चार श्रृंग, भूत, वर्तमान और भविष्य तीन पाद, नित्य और अनित्य दो सिर, सात विभक्तियां सात हाथ तथा सिर, कण्ठ और हृदय में बद्धता निरूपित है। महादेव के समान यह शब्द वृषभ प्राणिमात्र में समाया हुआ है7।

ऋग्वेद में तानि चत्वारि वाक् परिमिता पदानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिणः8 कहकर वाक् तत्त्व की गम्भीर मीमांसा की गई है। इसी प्रसंग में तीन वाणियों को गुहा में निहित बताकर वाणी के तुरीय (चतुर्थ) प्रकार के साथ मानव को जोड़ा गया है9।

ऋग्वेद में कर्मयोग का प्रशस्त पथ प्राप्त होता है। कर्म पर आस्था मानव को पलायनवाद से विमुख करती है तथा विजय के वरण के लिए सत् का अवलम्बन लेकर संघर्ष के लिए प्रेरित करती है। यही कारण है कि ऋग्वेद का ऋषि दीर्घ तथा पूर्ण जीवन की कामना करता है10।

ऋग्वेद के यमसूक्त में पुनर्जन्मवाद के संकेत मिलते हैं। वैदिक ऋषियों की मरणोत्तरविधान सम्बन्धी कल्पना अत्यन्त सुखकर है। मृत्यु के पश्चात कर्मानुसार देवलोक तथा पितृलोकादि की प्राप्ति होती है। इन्द्रियों के साथ आत्मा के संयोग को जन्म और इन्द्रियों से आत्मा का वियोग मृत्यु है। ऋग्वेद में पितरों के साथ परम व्योम में तथा दोष छोड़कर अपने घर जाने के लिए कहा गया है11। वेद में अमृतत्व ही परम पद या मोक्ष है। यज्ञ और ज्ञान के द्वारा मोक्ष की प्राप्ति होती है तथा इस लाभ के लिए इन्द्र की मित्रता भी बहुत उपयोगी होती है12। नासदीय सूक्त और पुरूष सूक्त में जहाँ एक ओर सृष्टि की पूर्णता और पुरूष की सर्वशक्तिमत्ता व विराटता पर प्रकाश डाला है, वहीं दूसरी ओर उनमें वे तत्त्व भी विद्यमान है, जिन्होंने सांख्य, योग तथा वेदान्त को भी प्रभावित किया है।

उद्धरण

1 एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्नि यमं मातरिश्वानमाहुः।।ऋक् 1 - 164 - 46

2 ऋग्वेद - 2 - 12 - 1 से 14

3 नासदीय सूक्त 10 - 121

4 नासदीय सूक्त।

5 'जो बहुदेवतावाद नहीं, पर प्रतीत होता है ' - एस. एन. दास गुप्ता।

6 द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिष्वजाते।
तयोरन्धः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यः अभिचाकशीति।।ऋक् - 10 - 164 - 20

7 चत्वारि शृंगा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्यां आविवेश।।ऋक् - 4 - 58 - 3

8 ऋक् - 1 - 64 - 45

9 तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति। ऋक् - 1 - 164 - 45

10 ऋग्वेद - 7 - 66 - 16

11 संगच्छस्व पितृभिः संयमेनेष्टापूर्तेन परमे व्योमन्।
हित्वायावाद्यं पुनरस्तमेहि संगच्छस्व तन्वा सुवर्चाः।।ऋक् - 10 - 14 - 8

12 ऋक् - 10 - 62 - 1